दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

<u>आप.वि.वा. 1328/2007</u>

निर्णय तिथि : 06.05.2008

श्री विजय चौधरी .... याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री रुचिर बत्रा, श्री संदीप चौधरी और
श्री विजय चौधरी अधिवक्ता

बनाम

श्री ज्ञान चंद जैन .... प्रत्यर्थी

द्वारा: श्री डी.के. ठाकुर अधिवक्ता

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति श्री वीपिन सांघी

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है?
2. रिपोर्टर के पास भेजा जाना है या नहीं? हां
3. क्या निर्णय को डायजेस्ट में बताया जाना चाहिए? हाँ

<u>न्या. वीपिन सांघी, (मौखिक)</u>

1. यह याचिका दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत (संक्षेप में 'कोड') "ज्ञान चंद जैन बनाम विजय चौधरी" शीर्षक से परक्राम्य लिखत अधिनियम की

धारा 138 के तहत शुरू की गई कार्यवाही को अभिखंडित करने के लिए दायर की गई है, जो पहले सुश्री नविता कुमारी बाघा के न्यायालय में लंबित थी और अब श्री सुदेश कुमार, एम.एम., पटियाला हाउस, नई दिल्ली के न्यायालय में लंबित है।

2. शिकायतकर्ता/प्रत्यर्थी का मामला उपरोक्त शिकायत में यह है कि 8.8.2004 को (जिसे प्रत्यर्थी के अधिवक्ता के अनुसार 6.8.2004 पढ़ा जाना चाहिए), अभियुक्त/याचिकाकर्ता शिकायतकर्ता की दुकान पर आया और खेप/बिक्री के आधार पर 1,52,35,000/- रूपये के कुछ हीरे और हीरे से जड़े गहने लिए और इसके बदले में, अभियुक्त/याचिकाकर्ता ने चेक सं. 061630 फेडरल बैंक, विदेशी शाखा, नई दिल्ली दिनांक 10.4.2006 के नाम से 1,52,35,000/- रूपये की राशि के लिए जारी किया। यह भी आरोप लगाया गया कि शिकायतकर्ता ने वसूली के लिए अपने बैंकर के माध्यम से उक्त चेक प्रस्तुत किया और उसे बिना भुगतान के यह कहते हुए वापस कर दिया गया कि ***"निधि अपर्याप्त है"*** और ***"कुर्की आदेश/न्यायालय के आदेश से भुगतान रोक दिया गया है"।***

3. याचिकाकर्ता ने प्रस्तुत किया कि शिकायतकर्ता के अनुसार भी, उक्त चेक पर आगे की तारीख डाला हुआ था, जो अपने कथित जारी होने की तारीख से लगभग एक वर्ष और आठ महीने के बाद भुनाने के लिए प्रस्तुत करने योग्य था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इस बीच, जिस खाते पर कथित रूप

से चेक जारी किया गया था, उसका संचालन प्राथमिकी सं. 283/2005 भा.दं.सं. की धारा 06/420/467/468/471/120-ख के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ थाना कनॉट प्लेस में दर्ज कुर्की आदेश/न्यायालय के आदेश के कारण रोक दिया गया है। उक्त कुर्की आदेश के कारण, याचिकाकर्ता के लिए खाते में कोई राशि जमा करने या उससे कोई राशि निकालने के लिए उक्त खाते को संचालित करना संभव नहीं था। परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध सिद्ध होने के लिए, चेक जारी करने वाले को अपने बैंकर के पास उस राशि के भुगतान के लिए खाता चालू रखना होगा जिसके लिए उसे चेक दिया गया है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि अनाद्दत करने की तिथि पर यह नहीं कहा जा सकता कि खाता याचिकाकर्ता द्वारा चालू नहीं था और इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध किए जाने का कोई सवाल ही नहीं था।

4. उक्त चेक की कथित चोरी, प्रत्यर्थी द्वारा इसे भरे जाने तथा पक्षकारगण के बीच लेन-देन के संबंध में; पक्षकारगण के बीच विभिन्न अन्य आरोप-प्रत्यारोप हैं। हालाँकि, मैं वर्तमान कार्यवाही में उनमें से किसी भी मुद्दे से चिंतित नहीं हूँ। मुझे केवल इस मुद्दे का सामना करना पड़ रहा है कि क्या ऐसे मामले में जहाँ बैंक खाते की कुर्की के कारण भुगतान बंद करना पड़ा, जिस पर न्यायालय के आदेश द्वारा चेक निकाला गया, आगे की तारीख डाले हुए चेक के संबंध में, जो कुर्की चेक जारी होने की तारीख और चेक के तहत

भुगतान देय होने की तारीख के बीच हुई है, परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध किया गया कहा जा सकता है, यदि चेक को निधियों के अपर्याप्त होने के कारण के अलावा "कुर्की आदेश / न्यायालय के आदेश द्वारा भुगतान रोक दिया गया" कारण से अनाद्दत किया गया है।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने अपने प्रस्तुतियों के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:

1. रमेश कुमार बनाम केरल राज्य, 2008(2) सिविल न्यायालय मामला 099 (केरल);

2. स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक और अन्य बनाम राज्य और अन्य, 2008(1) सिविल न्यायालय मामला 442 (दिल्ली), और;

3. ***नागराज उपाध्याय बनाम एम. संजीवन,*** 2007(4) सिविल न्यायालय मामला 387 (कर्नाटक)।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुति यह है कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के प्रावधान की व्याख्या करते समय, न्यायालय को उस नुकसान को ध्यान में रखना होगा जिसका उक्त प्रावधान उपचार करना चाहता है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि न्यायालयों ने समय-समय पर धारा 138 की व्याख्या की है ताकि उन मामलों में इसे सार्थक रूप से लागू किया जा सके जहाँ चेक धारा 138 में उल्लिखित आधारों के अलावा अन्य आधारों का निर्माण करके चेक के भुगतान से अर्थोपाय का सहारा लेता है, जैसे कि भुगतान रोकने के निर्देश जारी करना, बैंक खाते को बंद करना

आदि। अपनी प्रस्तुतियों के समर्थन में, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

1. ***पवन कुमार बनाम आशीष एंटरप्राइजेज और अन्य,*** 1993(1) अपराध 51.

2. ***मैसर्स मोदी सीमेंट लिमिटेड बनाम कुचिल कुमार नंदी,*** आई.आर. 1998 एस.सी. 1057;

3. ***एन.ई.पी.सी. माइकॉन लिमिटेड और अन्य बनाम मैग्मा लीजिंग लिमिटेड,*** 1999 क्रि. एल.जे. 2883;

4. ***योगेंद्र कुमार गुप्ता बनाम राम प्रकाश अग्रवाल,*** 2007(2) अपराध 467 (एम.पी.);

5. ***विनोद तन्ना और अन्य बनाम जहीर सिद्दीकी,*** 2002(1) अपराध 104;

6. ***बिशन दयाल बनाम दिनेश कुमार सिंघल //*** (2007) डी.एल.टी. (क्रि.) 630।

7. ***डी. विनोद शिवप्पा बनाम नंदा बेलियप्पा,*** 130 (2006) डी.एल.टी. 534 (एस.सी.)

7. मैं याचिकाकर्ता द्वारा उद्धृत मामलों की जांच कर रहा हूं और इसके बाद मैं प्रत्यर्थी द्वारा उद्धृत मामलों की जांच करूंगा। ***रमेश कुमार*** (पूर्वोक्त) में, उसी तारीख को जिस दिन अभियुक्त ने चेक जारी किए अर्थात 25.9.2000 को, तिरुवनंतपुरम में कंपनी न्यायालय ने अभियुक्त कंपनी को बंद करने के आदेश पारित किए। इनमें से एक चेक का *"अपर्याप्त निधि"* के कारण

अनादृत किया गया था, जबकि अन्य दो का *"न्यायालय द्वारा परिचालन रोके जाने"* का कारण बताते हुए अनादृत किया गया था। *"अपर्याप्त निधि"* के कारण अनादृत किए गए चेक के संबंध में, उच्च न्यायालय ने अभियुक्त द्वारा की गई शिकायत की चुनौती को खारिज कर दिया। हालांकि, न्यायालय ने उन दो चेकों के संबंध में दर्ज शिकायतों के संबंध में अंतर किया, जिन्हें *"न्यायालय द्वारा परिचालन रोक दिए जाने"* के कारण अनादृत कर दिया गया था। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जब, न्यायालय के आदेश के कारण, बैंक को अनिवार्य रूप से अभियुक्त कंपनी के खाते से कोई भुगतान नहीं करना था, यह कहना अनुचित और अवैध है कि कंपनी का कोई कर्मचारी, जिसने अभियुक्त कंपनी की ओर से दो चेक जारी किए थे, उन्हें अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। ***स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक*** (पूर्वोक्त) में, कर वसूली अधिकारी ने ए.डी. एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के खाते को कुर्क करते हुए कुर्की के वारंट जारी किए। 11.2.2003 को कर वसूली अधिकारी ने याचिकाकर्ता, स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक को कुर्की के अनुसरण में ए.डी. एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के खाते में पड़े धन को विप्रेषित करने के लिए कहा। 3.3.2003 को, ए.डी. एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड ने शिकायतकर्ता मैसर्स ऑम्नी प्लास्ट प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में 4,86,000 रूपये का बैंकर चेक तैयार किया और उसे उक्त कंपनी को सौंप दिया। जब बैंकर चेक को भुनाने के लिए प्रस्तुत किया गया, तो उसे बिना भुगतान किए वापस कर दिया गया, जिसमें रिटर्न मेमो के साथ "आहर्ता को संदर्भित करें" के निर्देश थे। मैसर्स

ऑम्नी प्लास्ट प्राइवेट लिमिटेड ने स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक के खिलाफ अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायत दायर किया। इस न्यायालय का विचार था कि चूँकि बैंकर चेक ग्राहक के खाते से विकलन (डेबिट) करने के बाद जारी किया गया था, लेकिन खाते को कुर्क करने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा खाते को विधिक रूप से कुर्की कर लिया गया था, इसलिए भुगतान आदेश जारी करना, जो कि चूक या लापरवाही का परिणाम था, शिकायतकर्ता को अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायत करने का अधिकार नहीं देता, क्योंकि ऐसी शिकायत लापरवाही के अपकृत्य पर आधारित नहीं हो सकती। अधिनियम की धारा 138 के तहत देयता तय करने के लिए अनिवार्य शर्त बैंक द्वारा भुगतान न किए गए चेक को वापस करना है, क्योंकि या तो उस खाते में जमा राशि चेक को स्वीकार करने के लिए अपर्याप्त है, या चेक की राशि बैंक के खाताधारकों के बीच समझौते के तहत उस खाते से भुगतान की जाने वाली राशि से अधिक है। नतीजतन, मैसर्स ओम्नी प्लास्ट प्राइवेट लिमिटेड द्वारा दायर शिकायत को अभिखंडित कर दिया गया। ***नागराज उपाध्याय*** (पूर्वोक्त) मामले में, कर्नाटक उच्च न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि जहाँ अभियुक्त के खाते को बैंक द्वारा बैंक के कहने पर बंद किया गया था, न कि अभियुक्त के कहने पर, अधिनियम की धारा 138 के प्रावधान लागु नहीं होते हैं। इस मामले में न्यायालय ने वस्तुतः पाया कि बैंक द्वारा खाता धारक/अभियुक्त को सूचित किए बिना 25.6.1996 को अपने नियमों के तहत खाते को बंद कर दिया गया था, जिसके बाद उसने दिनांक 3.6.1997 को चेक

जारी किया था। चूँकि खाता अभियुक्त द्वारा बंद नहीं किया गया था, बल्कि बैंक ने खाताधारक को सूचित किए बिना स्वयं ही बंद किया था, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायत पोषणीय नहीं है।

8. प्रत्यर्थी ने ***पवनकुमार*** (पूर्वोक्त) पर भरोसा किया एवं यह तर्क दिया कि अधिनियम की धारा 138 तब लागु होती है जब संबंधित व्यक्ति जिसने चेक जारी किया है, उसके पास चेक को आद्दत करने के लिए पर्याप्त निधि नहीं होता है। इस मामले में बैंक ने चेककर्ता/खाताधारक के खिलाफ वसूली का वाद दायर किया था। चेककर्ता/खाताधारक के बैंक खाते में कोई राशि जमा नहीं थी। यह निर्णय वर्तमान मामले जैसी स्थिति का निपटान नहीं करता है, और इसलिए वर्तमान विवाद को तय करने में शायद ही कोई सहायता करता है। महत्वपूर्ण अंतर यह था कि चेककर्ता के खाते में कोई राशि नहीं थी जिस पर चेक काटा गया था और उसी बैंक द्वारा ठीक उसी कारण से वाद दायर किया गया था, कि चेककर्ता/खाताधारक ने बैंक से लिए गए ऋण का भुगतान भी नहीं किया था। चेक अनाद्दत का वास्तविक कारण निधि की कमी थी।

9. ***मैसर्स मोदी सीमेंट्स लिमिटेड*** (पूर्वोक्त) में, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक बार चेककर्ता द्वारा चेक जारी किए जाने के बाद, अधिनियम की धारा 139 के तहत धारक के पक्ष में धारणा उत्पन्न होती है,

और केवल इसलिए कि चेककर्ता भुगतान रोकने के लिए चेककर्ता या बैंक को नोटिस जारी कर दिया है, यह अधिनियम की धारा 138 के तहत चेककर्ता या चेक धारक द्वारा उचित समय पर कार्रवाई करने से नहीं रोका जा सकता है। उच्चतम न्यायालय ने अपने पहले के फैसले को पलटते हुए ***इलेक्ट्रॉनिक्स व्यापार और प्रौद्योगिकी विकास निगम लिमिटेड, सिकंदराबाद बनाम भारतीय प्रौद्योगिकीविद् और इंजीनियर (इलेक्ट्रॉनिक्स) (पी) लिमिटेड*** (1996) 2 एस.सी.सी. 739 जिसमें न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि "*.....चेक को आदाता या धारक को जारी करने के बाद और इसे भुनाने के लिए प्रस्तुत करने से पहले,* ***उसे नोटिस जारी किया जाता है कि वह इसे भुनाने के लिए प्रस्तुत न करे*** *और फिर भी आदाता या धारक उचित समय पर चेक को भुगतान के लिए बैंक में प्रस्तुत करता* है ***और जब निर्देश पर इसे वापस किया जाता है,*** तो धारा 138 लागू नहीं होती है" (जोर दिया गया), यह टिप्पणी की कि यदि इस प्रतिपादना को स्वीकार कर लिया जाता है तो धारा 138 एक मृत पत्र बन जाएगा, *"क्योंकि किसी ऋण या देयता के खिलाफ चेक जारी करने के तुरंत बाद* ***भुगतान रोकने के लिए बैंक को निर्देश देने से*** *चेककर्ता आसानी से दंडात्मक परिणामों से छुटकारा पा सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि अपराध किया गया था।"* पुनः, यह निर्णय वर्तमान तथ्यात्मक स्थिति के लिए अधिक प्रासंगिक प्रतीत नहीं होता। प्रत्यर्थी का मामला यह नहीं है कि याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए भुगतान रोकने के निर्देशों के कारण चेक अनाद्दत किया गया है। इसी तरह, ***नेपसी माइकॉन लिमिटेड लिमिटेड*** (पूर्वोक्त) में उच्चतम

न्यायालय का निर्णय प्रत्यर्थीगण के लिए कोई लाभप्रद नहीं है, क्योंकि तथ्यात्मक स्थिति वर्तमान मामले के तथ्यों से महत्वपूर्ण रूप से अलग है। उस मामले में चेक जारी करने वाले ने वह खाता बंद कर दिया था जिससे चेक जारी किया गया था। उस निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने टिप्पणी किया:

> "किसी खाते पर आहरित चेक जारी करने के बाद, **यदि कोई व्यक्ति उस खाते को बंद कर देता है**, सिवाय इस तथ्य के कि यह किसी अन्य अपराध की श्रेणी में आता है, तो यह निश्चित रूप से धारा 138 के तहत अपराध होगा, क्योंकि उस खाते में चेक का आद्दत करने के लिए अपर्याप्त या कोई निधि नहीं थी।" (जोर दिया गया)

10. उपरोक्त से, ऐसा प्रतीत होता है कि अधिनियम की धारा 138 के दायरे में चेक जारीकर्ता को लाने के लिए, जब चेक, अधिनियम के तहत विशेष रूप से प्रदान किए गए कारणों से भिन्न स्पष्ट कारणों से अनाद्दत किया जाता है, तो यह स्थापित करना आवश्यक है कि स्पष्ट कारण चेककर्ता के स्वैच्छिक कार्य/चूक के कारण है, और यह केवल चेक के भुगतान से बचने के लिए एक चाल है और वास्तविक कारण खाते में निधि की अपर्याप्तता है, या चेक की राशि उस व्यवस्था से अधिक है जो चेककर्ता ने बैंक के साथ किसी समझौते के तहत की है।

11. ***योगेंद्र कुमार गुप्ता*** (पूर्वोक्त) में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया है कि चेक अनाद्दत करने का कारण पूरी तरह से अप्रासंगिक है, और यदि अभियुक्त को मांग नोटिस दिए जाने के बावजूद राशि

का भुगतान नहीं किया जाता है, तो उसे अधिनियम की धारा 138 के तहत उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। उचित सम्मान के साथ, उपरोक्त निर्णय में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दी गई व्याख्या मुझे अपील नहीं करती है। अपने उपरोक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने ***मोदी सीमेंट्स लिमिटेड*** (पूर्वोक्त) के निर्णय पर भरोसा किया है, जो एक ऐसा मामला था जिसमें चेक जारी करने वाले ने चेक जारी करने के बाद और अदाकर्ता द्वारा इसे प्रस्तुत करने से पहले भुगतान रोकने के निर्देश जारी किए थे। मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के संबंध में, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्चतम न्यायालय ने इस निर्णय में एक सामान्य और व्यापक प्रतिपादना नहीं रखा है कि चेक के अनाद्दत करने का कारण चाहे जो भी हो, यदि चेक जारी करने वाला, आदाता द्वारा क़ानूनी नोटिस जारी करने के बावजूद भुगतान नहीं करता है, तो धारा 138 के तहत अपराध होता है। मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने ***राकेश नेमकुमार पोरवाल बनाम नारायण धोंडू जोगलेकर*** 1993 क्रि. एल.जे. 680 मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खण्ड न्यायपीठ के फैसले पर भी भरोसा किया है। ***राकेश नेमकुमार पोरवाल*** (पूर्वोक्त) में बंबई उच्च न्यायालय के निर्णय में की गई विभिन्न टिप्पणियाँ, निस्संदेह मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा ***योगेंद्र नाथ गुप्ता*** *(पूर्वोक्त)* में निर्धारित प्रतिपादना का समर्थन करती हैं। ***राकेश नेमकुमार पोरवाल*** *(पूर्वोक्त)* में बॉम्बे उच्च न्यायालय ने टिप्पणी की:

> "21. धारा 138 का स्पष्ट पठन हमारे दिमाग में कोई संदेह नहीं छोड़ता है कि जिन परिस्थितियों में इस तरह का अनाद्दत किया

जाता है, उन्हें पूरी तरह से नजरअंदाज करने की आवश्यकता है। इस मामले में, विधि केवल इस तथ्य पर ध्यान देता है कि भुगतान नहीं हुआ है यह बहुत मायने नहीं रखता कि किसी भी कारण से यह स्थिति उत्पन्न हुई है। उदाहरण के लिए, यदि किसी खाते को बंद करना या भुगतान को रोकना या अनादृत करने के किसी अन्य सामान्य कारण को उचित ठहराया जाना था, तो विधायिका ने इन्हें धारा में अपवाद के रूप में निर्धारित किया होगा जो अपराध नहीं है। धारा 138 से ऐसा कोई आशय नहीं समझा जा सकता, क्योंकि ऐसा कोई आशय मौजूद ही नहीं है। विधायिका द्वारा दिया गया एकमात्र अपवाद चेककर्ता को नोटिस प्राप्त होने के 15 दिनों के भीतर राशि का भुगतान करने का अंतिम अवसर देने के संबंध में है, जो दूसरे शब्दों में, किसी की ईमानदारी को साबित करने का अंतिम अवसर प्रदान करता है। यह स्पष्ट है कि अनादृत चेक जारी करने की व्यापक परंपरा और भुगतान से बचने के कई सरल तरीकों को ध्यान में रखते हुए, विधायिका ने एक व्यावहारिक स्थिति का विकल्प चुना है। इस संभावना को नजरअंदाज नहीं किया गया है कि किसी खाते से अनजाने में अधिक राशि निकाल ली गई हो या तकनीकी कारणों से कोई राशि अनादृत हो गई हो, या कोई वास्तविक गलती हुई हो और विधायिका द्वारा नोटिस की तामील के बाद दी गई रियायत अवधि का उद्देश्य चेककर्ता को इनमें सुधार करने का अवसर प्रदान करना है। निस्संदेह, जब जमाकर्ता की बेईमानी के कारण अनादृत हुआ है, तब भी चेककर्ता को अन्यथा कार्य करने का अंतिम मौका दिया जाता है। नतीजतन, अनादृत करने के कारण भले ही बहुत वैध हों, जैसा कि इस मामले में इंगित करने का प्रयास किया गया है, जब ऐसी शिकायत प्रस्तुत की जाती है तो मजिस्ट्रेट को इसे ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए और न ही इसे ध्यान में नहीं रखा जा सकता है।"

"28. ..... बैंक की शब्दावली और पृष्ठांकन या वे परिस्थितियां जिनके तहत चेक वापस किया गया है, मार्गदर्शक मानदंड नहीं हैं, बल्कि तथ्य यह है कि चेक प्रस्तुत करने पर भुगतान नहीं किया गया था। इसके लिए कई कारण हो सकते हैं (यानी चेक के अनादृत करने के लिए) लेकिन स्थिति का सार यह है कि बैंकर द्वारा भुगतान नहीं किया जा सका और कारणों के तंत्र को छोड़कर, यह अपरिहार्य निष्कर्ष कि, यदि निधि उपलब्ध होता, तो भुगतान किया गया होता, इस स्थिति की ओर वापस ले जाता है कि अनादृत

करना, इसलिए, धन की अपर्याप्तता को दर्शाता है। हम इस दृष्टिकोण को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 6 में दी गई चेक की परिभाषा से पुष्ट करते हैं, जो इसे एक निर्दिष्ट बैंकर पर लिखे गए विनिमय पत्र के रूप में परिभाषित करती है। विनिमय पत्र को धारा 5 में परिभाषित किया गया है जो इस प्रकार है :

> "विनिमय पत्र एक लिखित दस्तावेज है जिसमें निर्माता द्वारा हस्ताक्षरित एक बिना शर्त आदेश होता है जो किसी निश्चित व्यक्ति को एक निश्चित धनराशि का भुगतान केवल किसी निश्चित व्यक्ति या दस्तावेज के धारक को, या उसके आदेश पर करने का निर्देश देता है।"

12. ***राकेश नेमकुमार पोरवाल*** (पूर्वोक्त) में बॉम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष उठे विवाद और उन परिस्थितियों का विश्लेषण करना उचित होगा जिनमें न्यायालय द्वारा ये टिप्पणियां की गई थीं। न्यायालय एक ऐसी स्थिति पर विचार कर रहा था, जिसमें शिकायतकर्ता ने अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायत, धारा के तहत प्रदत्त अनादृत करने के बाद 15 दिनों की नोटिस अवधि के भीतर दायर की थी। इस तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में, वास्तविक विवाद यह था कि क्या शिकायत समय से पहले दर्ज की गई थी या नहीं। हालांकि, ऐसा प्रतीत होता है कि विभिन्न अन्य मुद्दों पर भी दलीलें दी गईं, जिन पर मामले में उठने वाले मुख्य मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए विचार करने की आवश्यकता भी नहीं थी। न्यायालय ने अपने विचार के लिए निम्नलिखित प्रश्न विरचित किए थे:

> "(क) क्या किसी शिकायतकर्ता को यह स्वतंत्रता है कि वह परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध का आरोप लगाने वाली आपराधिक न्यायालय की प्रक्रिया को किसी भी समय शुरू कर

सकता है, जैसा कि यह धारा में निर्धारित किया है और क्या यह दुर्बलता ठीक करने योग्य है या क्या यह अभियोजन पक्ष के लिए घातक है?

(ख) परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 और 142 में निर्धारित समय-सीमा की गणना किस सही तरीके से की जानी चाहिए?

(ग) क्या शिकायतकर्ता को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत कार्यवाही के दौरान, बयानों या तथ्यात्मक स्थिति में प्रभावी संशोधन के उद्देश्यों के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष सामग्री पेश करने की स्वतंत्रता होगी या जैसा कि वर्तमान मामले में हुआ है, शिकायत में निर्धारित सामग्री तिथि या इसके विपरीत, क्या निचली न्यायालय का रिकॉर्ड पवित्र है और इस स्तर पर इसे बदला नहीं जा सकता है?

(घ) क्या धारा 138 को उन मामलों की संकीर्ण श्रेणी तक सीमित करके प्रतिबंधात्मक आवेदन दिया जाना चाहिए जहाँ अस्वीकृति पर्ची में "निधि की अपर्याप्तता" लिखा हो या क्या इसे बिना किसी अनुपालन के अंधाधुंध रूप से चेक जारी करने की घातक व्यापार प्रथा के लिए एक प्रतिकार के रूप में निर्धारित किया गया था, दूसरे शब्दों में, क्या चेक का अनादृत करना सामान्य रूप से आपराधिक परिणामों को आकर्षित करेगा?"

13. न्यायालय ने शिकायतकर्ता के विरुद्ध पहले प्रश्न का उत्तर दिया, और अभिनिर्धारित किया कि शिकायत अपरिपक्व थी और खारिज करने योग्य थी। इसलिए, मेरे विनम्र विचार में, प्रश्न (घ) पर विचार करने की आवश्यकता नहीं थी। प्रश्न (घ) पर न्यायालय का निर्णय, मेरे विचार में इतरोक्ति था।

14. अन्यथा भी, उपरोक्त उद्धृत टिप्पणियां कानून की स्पष्ट एवं सुस्पष्ट भाषा के अनुरूप प्रतीत नहीं होती हैं। अधिनियम की धारा 138 एक व्यापक प्रावधान है। यह सबसे पहले अपराध का निर्माण करता है, उन तत्वों

को परिभाषित करता है जो अपराध को पूरा करने के लिए आवश्यक हैं, तथा उसके बाद वह दंड भी निर्धारित करता है जिससे अपराधी को दंडित किया जा सकता है। धारा को दो भागों में विभाजित किया गया है। पहला भाग उन आवश्यक अवयवों से संबंधित है जो अपराध का गठन करते हैं। दूसरा भाग एक परंतुक है, जिमें कुछ पूर्व शर्तों को निर्धारित किया गया जिसे धारा को लागू करने से पहले पूरा किया जाना चाहिए। धारा के मुख्य भाग में पाई जाने वाली आवश्यक पूर्व शर्तों को धारा के लागु होने के लिए केवल परंतुक में निर्धारित पूर्व शर्तों पर ध्यान केंद्रित करके समाप्त नहीं जा सकता है।

15. विधायिका ने अपने विवेक में *"अनाद्दत करने के कारणों की परवाह किए बिना" अभिव्यक्ति का सावधानीपूर्वक उपयोग नहीं किया है और इसके बजाय इन शब्दों का प्रयोग किया है" या तो उस खाते में जमा की गई राशि चेक का आद्दत करने के लिए अपर्याप्त है या यह उस बैंक के साथ किए गए समझौते द्वारा उस खाते से भुगतान की जाने वाली राशि से अधिक है।"*

16. ***कुसुम इंगोट्स एंड अलॉयज लिमिटेड बनाम पेन्नार पीटरसन सिक्योरिटीज लिमिटेड*** (2000) 2 एस.सी.सी. 745, में उच्चतम न्यायालय द्वारा अपराध होने के लिए आवश्यक तत्वों पर ध्यान दिया गया और इस प्रकार हैं:-

> "(i) किसी व्यक्ति ने किसी ऋण या अन्य दायित्व के निर्वहन के लिए उस खाते से किसी अन्य व्यक्ति को एक निश्चित राशि के

भुगतान के लिए बैंक में अपने द्वारा रखे गए खाते पर चेक आहरण किया होगा;

(ii) कि चेक जारी होने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर या इसकी वैधता की अवधि के भीतर, जो भी पहले हो, बैंक में प्रस्तुत किया गया हो;

(iii) कि चेक को बैंक द्वारा भुगतान किए बिना वापस कर दिया, या तो इसलिए कि जमा की गई राशि चेक का आद्दत करने के लिए अपर्याप्त है या यह बैंक के साथ किए गए समझौते द्वारा उस खाते से भुगतान की जाने वाली राशि से अधिक है;

(iv) चेक की वापसी के बारे में बैंक से जानकारी प्राप्त होने के 15 दिनों के भीतर, आदाता या धारक, चेक के नियत समय में, चेक जारी करने वाले को लिखित रूप में नोटिस देकर उक्त राशि के भुगतान की मांग करता है;

(v) इस तरह के चेक का जारी करने वाला उक्त सूचना की प्राप्ति के 15 दिनों के भीतर चेक के नियत समय में आदाता या धारक को उक्त राशि का भुगतान करने में विफल रहता है।"

17. *मैं अधिनियम की धारा 140 का भी उल्लेख कर सकता हूं, जिसमें कहा गया है कि "धारा 138 के तहत किसी अपराध के लिए अभियोजन में यह बचाव नहीं होगा कि जब चेककर्ता ने चेक जारी किया था तो उसे यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं था कि चेक* ***उस धारा में बताए गए कारणों से*** *अनाद्दत या प्रस्तुत किया जा सकता है।"* (जोर दिया गया)। इसलिए, संसद का आशय चेक अनाद्दत करने के सभी मामलों में अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध पैदा करना नहीं है, बल्कि केवल ऐसे मामलों में है जहाँ अनाद्दत *"उस धारा में बताए गए कारणों से"* हुआ है।

18. मैं बॉम्बे उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के उपरोक्त दृष्टिकोण से सम्मानपूर्वक असहमत हूँ। मेरे विचार में संसद द्वारा कानून में प्रयुक्त की गई भाषा को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है तथा उसके अर्थ को इस सीमा तक नहीं बढ़ाया जा सकता कि संसद द्वारा प्रयुक्त स्पष्ट शब्द ही समाप्त हो जाएं। इसके अलावा, यदि इस निर्णय को सही कानून निर्धारित करने के रूप में समझा जाय, तो यह ***कुसुम इंगोट्स*** (पूर्वोक्त) मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के साथ असंगत है, जिसमें उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अधिनियम की धारा 132 सहपठित धारा 138 के तहत कार्यवाही नहीं होगी, जहाँ उस तारीख से पहले, जिस दिन चेक काटा गया था या नोटिस के बाद 15 दिनों की क़ानूनी अवधि की समाप्ति से पहले, कंपनी के खिलाफ एस.आई.सी.ए. की धारा 22क के तहत बी.आई.एफ.आर. का प्रतिबंध आदेश पारित किया गया था। ऐसे मामले में यह उचित रूप से कहा जा सकता है कि बैंक द्वारा चेक को अनाद्दत करना और कंपनी और/या उसके निदेशकों द्वारा राशि का भुगतान करने में विफलता अभियुक्त के नियंत्रण से परे कारणों से हुई है। इस न्यायालय ने ***एम.एल.गुप्ता एवं अन्य बनाम सीएट फाइनेंशियल सर्विसेज लिमिटेड***, 136(2007) डी.एल.टी. 308 में भी अभिनिर्धारित किया है कि एक बार कंपनी न्यायालय किसी कंपनी को बंद करने का आदेश पारित कर देता है और एक अस्थायी परिसमापक नियुक्त करता है, उन चेकों के संबंध में जो न्यायालय द्वारा इस तरह के आदेश के पारित होने से पहले जारी किए गए

हो सकते हैं, जो समापन आदेश पारित होने के बाद देय हो गए थे, tअधिनियम की धारा 138 के तहत कोई अपराध नहीं माना जाएगा।

19. इसमें कोई संदेह नहीं है कि उक्त प्रावधान का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए ताकि उस उद्देश्य को आगे बढ़ाया जा सके जिसके लिए इसे अधिनियमित किया गया है। हालाँकि, उक्त धारा की व्याख्या को इस सीमा तक नहीं बढ़ाया जा सकता है कि चेक काटने वाले को दंडात्मक कार्रवाई के लिए उत्तरदायी बनाया जा सके जहाँ बैंक द्वारा चेक को किसी भी कारण से भुगतान नहीं किया गया है। यह सुस्थापित है कि दंडात्मक कानूनों का दृढ़ता से अर्थ लगाया जाना चाहिए।

20. अधिनियम का अध्याय XVII उन लोगों को अनुशासित करने के लिए बनाया गया है जो कुछ मामलों में चेक द्वारा भुगतान करने की प्रणाली को बदनाम करते हैं। यद्यपि यह चेक के अनादृत करने और कुछ परिस्थितियों में भुगतान करने में विफलता के खिलाफ विधि की मंजूरी देता है, तथापि उक्त अध्याय का उद्देश्य देय राशि की वसूली के लिए कोई उपाय प्रदान करना नहीं है। ऐसा नहीं है कि देय समय पर आदाता या चेक धारक के पास अपने दावे को लागू करने के लिए विधि में कोई अन्य उपाय उपलब्ध नहीं है। उनके पास सिविल वाद दायर करने का उपाय है, यहां तक कि वह अपने दावे को स्वतंत्र रूप से लागू करने के लिए सि.प्र.स. के आदेश 37 तहत संक्षिप्त वाद भी दायर कर सकते हैं। वह कंपनी अधिनियम की धारा 433 के

तहत समापन करने के लिए भी कार्रवाई शुरू कर सकता है। निश्चित रूप से, चेक का अनाद्दत करना भी धोखाधड़ी के अपराध में शामिल हो सकता है। इसलिए भा.दं.सं. की धारा 420 के तहत शिकायत भी पोषणीय हो सकती है।

21. ***विनोद तन्ना (पूर्वोक्त)*** में दिया गया निर्णय, ***राकेश नेमकुमार पोरवाल (पूर्वोक्त)*** में दिए गए बॉम्बे उच्च न्यायालय के निर्णय पर आधारित है। चूँकि मैंने उक्त निर्णय के साथ अपनी असहमति व्यक्त की है, इसलिए मैं ***विनोद तन्ना*** (पूर्वोक्त) मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले का पालन करने के लिए सहमत नहीं हूं। ***बिशन दयाल*** (पूर्वोक्त) मामले में इस न्यायालय का निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता। ***बिशन दयाल*** (पूर्वोक्त) में अभिखंदन याचिका इस आधार पर दायर की गई थी कि याचिकाकर्ता पर शिकायतकर्ता का कोई बकाया नहीं है। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि संहिता की धारा 482 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय दावे की सत्यता की जांच नहीं करनी चाहिए। जैसा कि ऊपर कहा गया है, मैं केवल उपरोक्त विधिक मुद्दे से संबंधित हूं, और मैं वर्तमान मामले में पक्षकारगण के बीच तथ्यात्मक विवादों में नहीं जा रहा हूं। प्रत्यर्थी द्वारा भरोसा किया गया अंतिम निर्णय ***डी. विनोद शिवप्पा*** (पूर्वोक्त) में उच्चतम न्यायालय का है। उसी को उद्धृत करते हुए यह तर्क दिया गया है कि अधिनियम की धारा 138 का उद्देश्य बेईमान व्यक्तियों को दंडित करना है, जो बिना किसी आशय के चेक जारी करके अपनी देनदारी का निर्वहन करने का

दावा करते हैं, जो कि उनके खाते में अपनी देनदारी का निर्वहन करने के लिए अपर्याप्त शेष राशि द्वारा प्रदर्शित होता है। उक्त निर्णय के पैरा 13 में उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:-

> "13. अधिनियम की धारा 138 का उद्देश्य बेईमान व्यक्तियों को दंडित करना है, जो बिना किसी आशय के चेक जारी करके अपनी देनदारी का निर्वहन करने का दावा करते थे, **जो इस तथ्य से प्रदर्शित होता था कि दायित्व का निर्वहन करने के लिए खाते में पर्याप्त शेष नहीं था**। ऐसे बेईमान चेक जारी करने वालों पर सिविल दायित्व के अलावा आपराधिक दायित्व भी लगाया गया था। हालाँकि, अभियोजन पक्ष को कुछ शर्तों के अधीन रखा गया था। किसी ईमानदार चेक जारी करने वाले के खिलाफ अनावश्यक अभियोजन से बचने के लिए, या चेककर्ता को सुधार करने का अवसर देने के लिए, धारा 138 के परंतुक में प्रावधान है कि चेक के अनाद्दत करने के बाद, आदाता या चेक के धारक को नियत समय में भुगतान को पूरा करने के लिए चेककर्ता को लिखित सूचना देनी चाहिए। चेककर्ता को भुगतान करने के लिए नोटिस प्राप्त होने की तारीख से 15 दिनों का समय दिया जाता है, तथा यदि वह भुगतान करने में विफल रहता है तो उसे अभियोजित किया जा सकता है। परंतुक जिस उद्देश्य को प्राप्त करना चाहता है, वह बिल्कुल स्पष्ट है। ऐसा हो सकता है कि बैंक की गलती के कारण, इस तथ्य के बावजूद कोई चेक वापस किया जा सकता है कि उस खाते में पर्याप्त शेष राशि है जिससे राशि का भुगतान किया जाना है। ऐसे मामले में यदि चेक जारी करने वाले पर बिना किसी सूचना के अभियोजित किया जाता है, तो इससे ईमानदार चेककर्ता के साथ अन्याय होगा और उसे कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। ऐसे मामलों की भी कल्पना की जा सकती है जहाँ कोई सुविचारित चेककर्ता अनजाने में अपने नियंत्रण से परे कारणों से आवश्यक व्यवस्था करने से चूक गया हो, भले ही वह वास्तव में अपने द्वारा काटे गए चेक का आद्दत करने का इरादा रखता हो। विधि अनजाने में या लापरवाही से की गई ऐसी चूकों को क्षम्य मानता है, बशर्ते कि नोटिस के बाद चेक जारीकर्ता सुधार करे और निर्धारित अवधि के भीतर राशि का भुगतान करे। यही कारण है कि

> धारा 138 के परंतुक का खंड (ग) प्रावधान करता है कि यह खंड तब तक लागू नहीं होगी जब तक कि चेककर्ता उक्त सूचना की प्राप्ति के 15 दिनों के भीतर भुगतान करने में विफल न हो जाए। दोहराता हूँ कि, परंतुक ईमानदार चेककर्ता की रक्षा करने के लिए है जिनके चेक दूसरों की गलती के कारण अनादृत हो गए हों, या जो वास्तव में अपना वादा पूरा करना चाहते थे, लेकिन अनजाने में या लापरवाही के कारण चेक के भुगतान के लिए आवश्यक व्यवस्था करने में विफल रहे। इस परंतुक का उद्देश्य बेईमान चेककर्ताओं की रक्षा करना नहीं है, जिनका कभी भी अपने द्वारा जारी किए गए चेक का आदृत करने का इरादा नहीं था, यह उनकी कार्यप्रणाली का एक हिस्सा है, जिससे वे अनजान व्यक्तियों को धोखा देते हैं।" (जोर दिया गया)।

22. उपरोक्त उद्धरण के अवलोकन से पता चलता है कि उच्चतम न्यायालय ने सचेत रूप से इन शब्दों का प्रयोग किया था, *"जो इस तथ्य से प्रदर्शित होता है कि खाते में उनकी देनदारी का भुगतान करने के लिए पर्याप्त शेष नहीं था"।* उच्चतम न्यायालय का यह अवलोकन मेरे विचार की भी पुष्टि करता है कि चेक के अनादृत करने का कारण जो भी हो, इसका संबंध खाते में निधि की कमी या चेककर्ता द्वारा बैंक के साथ किसी समझौते के तहत कोई व्यवस्था न किए जाने से होना चाहिए।

23. वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करने पर पता चलता है कि इस मामले में न्यायालय के आदेश द्वारा कुर्की, चेक के कथित जारी होने के बाद, लेकिन भुनाने के लिए प्रस्तुत करने से पहले की गई थी। याचिकाकर्ता के बैंक खाते की कुर्की से याचिकाकर्ता को उक्त खाते को संचालित करने या बनाए रखने में असमर्थ हो गया है। याचिकाकर्ता उक्त खाते में जमा करने या निकालने के अपने अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता था। भले ही यह तर्क के

लिए मान लिया जाय, कि चेक वास्तव में प्रतिवादी के प्रति याचिकाकर्ता के दायित्व के निर्वहन के लिए जारी किया गया था, और यह कि चेक जारी करने के समय उसके खाते में पर्याप्त शेष राशि नहीं थी, या अपने बैंकर के साथ कोई व्यवस्था नहीं थी, यदि बैंक खाता न्यायालय के आदेश के तहत कुर्क नहीं किया गया होता, तो भी याचिकाकर्ता को अपने खाते में धन जमा करने या खाते में पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था करने के लिए अपने बैंक के साथ समझौता करने से कोई नहीं रोक सकता था, ताकि वह प्रश्नगत चेक को उस तिथि तक आद्दत कर सके, जब उक्त चेक को जल्द से जल्द भुगतान के लिए प्रस्तुत किया जा सकता था। ऐसा इसलिए है क्योंकि कथित चेक के जारी होने की तारीख और इसे प्रस्तुत करने की तारीख के बीच लगभग एक साल और आठ महीने का पर्याप्त समय अंतराल था। जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने ***मौदी सीमेंट्स*** (पूर्वोक्त) में अभिनिर्धारित किया गया है, चेककर्ता के खाते में पर्याप्त शेष राशि के बिना चेक जारी करना अपने आप में अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध करने के समान नहीं है। हालांकि, इस मामले के तथ्यों के अनुसार, याचिकाकर्ता चाहे तो भी अपने खाते में निधि नहीं जमा कर सकता था या बैंक के साथ समझौता करके चेक प्रस्तुत करने पर भुगतान की व्यवस्था नहीं कर सकता था, क्योंकि चेक जारी करने वाले के बैंक खाते पर न्यायालय द्वारा कुर्की की गई थी। यह न्यायालय कुर्की, थाना कनॉट प्लेस में भा.दं.सं. की धारा 406/420/467/468/471 और 120-ख के तहत दर्ज प्राथमिकी संख्या 283/2005 से उत्पन्न मामले के निपटान करने हेतु न्यायालय

द्वारा की गई थी। चेककर्ता/याचिकाकर्ता के बैंक खाते की कुर्की को चेककर्ता का स्वैच्छिक कार्य नहीं कहा जा सकता है। यह नहीं कहा जा सकता है कि याचिकाकर्ता ने केवल अधिनियम की धारा 138 के तहत दंडात्मक परिणामों से बचने के उद्देश्य से ही खाते को कुर्क करने की योजना बनाई थी। यह भी नहीं कहा जा सकता कि बैंक खाते की कुर्की के बाद भी याचिकाकर्ता द्वारा ही वह चलाया जा रहा था। खाताधारक द्वारा किसी खाते को चलाए जाने के लिए, यह आवश्यक है कि वह या तो उसमें धन जमा करके या उससे धन निकालकर उक्त खाते को संचालित करने की स्थिति में हो। वह अपने उस बैंकर को प्रभावी निर्देश देने की स्थिति में होना चाहिए जिसके साथ खाता रखा जाता है। हालांकि, वर्तमान मामले में, एक बार न्यायालय के आदेश द्वारा खाते को कुर्क करने के बाद, उक्त खाते को याचिकाकर्ता द्वारा संचालित नहीं किया जा सका। वह अपने बैंकर को कोई बाध्यकारी निर्देश जारी नहीं कर सकता था, और बैंकर उक्त खाते के संबंध में उसके किसी भी निर्देश का आदृत करने के लिए बाध्य नहीं था, जब तक कि न्यायालय के आदेशों के तहत कुर्की जारी है।

24. उपरोक्त सभी कारणों से, मेरे विचार में, भले ही शिकायत की विषय-वस्तु को पूरी तरह से स्वीकार किया जाए, तो भी अधिनियम की धारा 138 के तहत अभियुक्त के खिलाफ कोई भी अपराध नहीं कहा जा सकता है, यह याचिका स्वीकार किए जाने योग्य है। इसलिए, मैं याचिका को स्वीकार

करता हूं और प्रत्यर्थी द्वारा विद्वान महानगर मजिस्ट्रेट, नई दिल्ली के समक्ष दायर शिकायत को अभिखंडित करता हूं।

6 मई, 2008 न्या. वीपिन सांघी,
ए.एस.

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*